ISSN 2349-638X

REVIEWED INTERNATIONAL JOURNAL

AAYUSHI INTERNATIONAL INTERDISCIPLINARY RESEARCH JOURNAL (AIIRJ)

MONTHLY PUBLISH JOURNAL

VOL-II ISSUE-V MAY 2015

Address
- Vikram Nagar, Boudhi Chouk, Latur.
- Tq. Latur, Dis. Latur 413512
- (+91) 9922455749, (+91) 9158387437

Email
- editor@aiirjournal.com
- aiirjpramod@gmail.com

Website
- www.aiirjournal.com

CHIEF EDITOR – PRAMOD PRAKASHRAO TANDALE

हिन्दी के स्वातंत्र्योत्तर आँचलिक उपन्यास

डॉ. गुलाब राठोड
हिन्दी विभाग,
कर्नाटक विश्वविद्यालय
धारवाड – 03

प्रायः स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यासों में 'आँचलिक उपन्यास' एक महत्वपूर्ण उपलब्धि रही है । सन् पचास से साठ के दशक में हिन्दी उपन्यास का एक नया रूप हमारे सामने आया जिसे 'आँचलिक उपन्यास' कहा गया । वे उपन्यास जिनमें किसी प्रदेश विशेष की संस्कृति, रीति–रिवाज, रहन–सहन, लोकजीवन, भाषा–बोली, धार्मिक विश्वास आदि का सजीव चित्रण कथानक के द्वारा किया जाता है ।

इन उपन्यास को आँचलिक कहने तथा उसकी महत्ता की ओर आलोचकों का ध्यान आकृष्ट करने का श्रेय सुप्रसिद्ध उपन्यासकार फणीश्वरनाथ 'रेणु' को है । उनका 'मैला आँचल' (1954 ई.) और परती परिकथा (1957 ई.) विशेष उल्लेखनीय है । 'मैला आँचल' में रेणु जी बिहार के पूर्णिमा जिले के ग्रामीण अंचल के रहन–सहन, रीति–रिवाज, राजनीतिक आस्थाओं आदि का विशद चित्रण किया है । मैला आँचल के कथानक में रेणु जी ने सन् 1942 ई. से लेकर गाँधीजी के निधन तक की 'मेरीगंज' (जिला पूर्णिया, प्रान्त बिहार) के जन–जीवन और परिस्थितियों का जीवन्त चित्र प्रस्तुत किया है । गाँव में विभिन्न वर्गों के लोग अपने–अपने 'टोले' में रहते हैं । मेरीगंज एक पिछडा हुआ गाँव है । जिसमें उच्चवर्ग–निम्नवर्ग, धनी–निर्धन, सभी वर्गों के लोग रहते हैं । इनमें पारस्परिक संघर्ष चलता रहता है । आजादी मिलने के बाद निम्नवर्ग में नई चेतना का उदय हुआ, जिससे यह संघर्ष और भी तीव्र हो गया

। इस गाँव की प्रगति में बाधक तत्व हैं – प्राचीन रुढिगत संस्कार, छुआ–छूत, आपसी संघर्ष, अंध–विश्वास आदि । जनता अब अपने उन दुश्मनों को अच्छी तरह पहचानने लगी । जो आजादी मिलते ही खद्दर पहनकर देशभक्ति और जनसेवा का लबादा ओढे हैं, किन्तु है पक्के स्वार्थी यही इस उपन्यास की मूल चेतना है । लेखक ने इस मूल चेतना का आधार गाँधीवादी दर्शन को ही बनाया है जिसके कारण स्वार्थी एवं अत्याचारी व्यक्ति का हृदय परिवर्तन हो जाता है और जमींदार अपनी सात सौ बीघा जमीन किसानों में बांटकर त्याग की जीति–जागती मूर्ति बन जाता है । रेणु जी ने वर्णनात्मक शैली का प्रयोग इस उपन्यास में स्थान–स्थान पर किया है ।

फणीश्वरनाथ रेणु के अतिरिक्त अन्य आँचलिक उपन्यासकार हैं – नागार्जुन । इन्होंने रतिनाथ की चाची (1948 ई.), बाबा बटेश्वरनाथ (1954 ई.), बलचनमा (1952 ई.), वरुण के बेटे (1957 ई.) तथा दुखमोचन (1959 ई.) आदि आँचलिक उपन्यास लिखे । एक आँचलिक उपन्यासकार के रूप में नागार्जुन फणीश्वरनाथ रेणु से कम नहीं हैं । नागार्जुन की विचारधारा सामाजिक यथार्थवाद से जुड़ी है पर उनके कथानक अंचल विशेष से लिए गए हैं और इसी कारण आँचलिक हैं । रतिनाथ की चाची उनका पहला उपन्यास – इसकी कथा भूमि मिथिला है । इसमें रतिनाथ की चाची गौरी विधवा ब्राह्मण के माध्यम से ग्रामीण जीवन की सामाजिक विषमता और गौरी की यातना का चित्रण किया गया है । 'बाबा बटेसरनाथ' (1954) उपन्यास में एक बुढा बरगद जैकिसुन से गाँव की कई पीढियों और उनके क्रमिक विकास की कहानी कहता है । 'दुख मोचन' (1957) उपन्यास में मध्यवर्गीय पात्र दुखमोचन की और 'वरुण के बेटे' (1957) उपन्यास में मछवारों के जीवन की कथा है । नागार्जुन के अन्य उपन्यासों में अन्धविश्वास, मूढता, बहुविध शोषण–प्रपीडन इत्यादी का मार्मिक चित्रण हुआ है । जब जमींदारी प्रथा का पतन शुरु हो गया था और निर्धन ग्रामीणों में जन–जागरण की किरणें फूटने लगी थीं, उसी काल को चित्रित करते हुए नागार्जुन ने उत्तरी बिहार के मिथिला अंचल के जीवन को सच्चाई, स्वाभाविकता और सलोनेपन की कथा से रोचक बनाकर 'बलचनमा' के

रूप में प्रस्तुत किया है । नागार्जुन की भाषा जनभाषा है । उनकी भाषा में नाना भाषा के शब्द दृष्टिगोचर होते हैं । तत्सम, तद्भव, देशी–विदेशी शब्दों का प्रचुर मात्रा में प्रयोग हुआ है । साथ ही उदयशंकर भ ` का 'सागर लहरे और मनुष्य' (1955 ई.) उपन्यास में बंबई महानगर के तट पर बसे मछवारों के ग्राम बरसोवा का जीवन अंकित हुआ है । इसका कथानक बंबई महानगर के बीच भी संचरण करता है । सागर लहरें और मनुष्य एक विशिष्ट उपन्यास है । यह मछवारों के जीवन संघर्ष, अभाव, संगति और विसंगति की प्रामाणिक कहानी है । रांगेय राघव का 'कब तक पुकारु' (1957 ई.) रांगेय राघव द्वारा लिखित आँचलिक उपन्यास है । प्रस्तुत उपन्यास में राजस्थान के करनट अथवा नटों के जीवन का यथार्थ चित्रण है । शोषित, उपेक्षित और उत्पीडित नट खानाबदोश जीवन जीते हैं । वे खाने–पीने, पहनने–ओढने और रहन–सहन के लिए समाज के उच्च वर्ग पर निर्भर करते हैं । रांगेय राघव ने नटों के जीवन को खुद बडी गहराई में उतरकर देखा परखा है और अपने अनुभवों की सुदृढ भिति पर इस कथानक को एक सामाजिक दस्तावेज बना दिया ।

प्रायः इस उपन्यास में सुखराम, प्यारी और कजरी के चारों ओर कथा घूमती है । राजस्थान और ब्रज प्रदेश के सीमांत पर बसा गाँव और उसके परिवेश में जीवन बिताने वाले नट की कथा के उपजीव्य हैं । उनके आचार–विचार, जनपदीय संस्कृति, अंधविश्वास, शोषण, अनैतिकता आदि को पहचान देती है यह कृति ।

इसी तरह ग्रामीण परिवेश को आधार बनाकर भी कुछ उपन्यास लिखे गए हैं । इनमें प्रमुख हैं – राही मासूम रज़ा का 'आधा गाँव' (1968 ई.) उपन्यास में गाजीपुर एक मुस्लिम बहुल गाँव गंगोली की कथा है । शिवप्रसाद सिंह का 'अलग–अलग वैतरणी' (1967 ई.) उपन्यास में स्वाधीनता प्राप्ति के बाद के टूटते हुए गाँव की कहानी अंकित है । राजेन्द्र अवस्थी का 'जंगल के फूल' (1960 ई.) उपन्यास में मध्यप्रदेश की जंगली जातियों का जीवंत चित्रण है । रामदरश मिश्र का 'पानी के प्राचीर' (1961 ई.) उपन्यास में गोरखपुर जिले के दो

नदियों से घिरे एक पिछड़े भू–भाग की कहानी है – और यह कहानी स्वाधीनता प्राप्ति तक की है । तथा हिमांशु श्रीवास्तव का 'रथ के पहिए' । इन सभी उपन्यासों में आधुनिकीकरण के कारण बदलते ग्रामीण समाज का चित्रण किया गया है ।

हिमांशु जोशी जी का 'नदी फिर बह चली' उपन्यास सन् 1976 ई. में प्रकाशित हुआ । साथ ही भैरवप्रसाद गुप्त का 'गंगा मैया' सन् 1953 ई. में प्रकाशित हुआ । प्रस्तुत उपन्यास में गुप्त जी ने भारतीय ग्रामीण–जीवन संघर्ष का सहज स्वाभाविक और वास्तविक अंकन किया है । यह उपन्यास किसानों के आर्थिक शोषण पर आधारित है । इसमें सामाजिक ऊँच–नीच, झूठी नैतिकता, रुढिग्रस्त रीति–रिवाज आदि बहुत मात्रा में देखने को मिलते हैं ।

प्रायः इसी सन्दर्भ में उन उपन्यासों को भी लिया जा सकता है जिनमें व्यंग्यात्मक लहजे में भारतीय समाज के समग्र रूप को चित्रित करने का प्रयास किया गया है । इस दृष्टि से श्रीलाल शुक्ल कृत 'राग दरबारी' (1968 ई.) उल्लेखनीय कृति है जिसमें स्वातंत्र्योत्तर भारत के ग्रामीण जीवन की मूल्यहीनता को परत–दर–परत उघाडने की कोशिश की गई है । इस उपन्यास की कथा भूमि है बड़े नगर से कुछ दूर बसा हुआ गाँव शिवपालगंज, जहाँ की जिन्दगी प्रगति और विकास के तमाम नारों के बावजूद निहित स्वार्थों एवं अवांछनीय तत्वों के सामने घिसट रही है । शिवपालगंज की पंचायत, कॉलेज की प्रबन्ध समिति और कोऑपरेटिव सोसाइटी के सूत्रधार वैद्य जी साक्षात रूप में वह राजनीतिक संस्कृति है जो प्रजातंत्र और लोकहित के नाम पर हमारे चारों और फल–फूल रही है ।

अमृतलाल नागर जी का 'बूँद और समुद्र' (1972 ई.) एक क्लासिकी परंपरा में आनेवाला स्वातंत्र्योत्तर भारतीय समाज व्यवस्था के टूटते संबंधों और परिवर्तित भारतीय मध्यवर्गीय जीवन परिवेश का यथार्थ के विशाल कैनवास पर रचित एक उपन्यास है । इस मध्यवर्गीय कथा में स्वयं नागर जी जुडे हुए हैं और उनकी अभिन्य कला भी अभिव्यक्त हुई है । इसके संबंध के कथाकार का वक्तव्य हैं –"यह उपन्यास देश के मध्यवर्गीय नागरीय समाज

का गुण दोष भरा चित्र ज्यों का त्यों आंकने की यथामति यथासाध्य प्रयत्न है ।"[1] समाज की प्रत्येक जनजाति और तुच्छ से तुच्छ जाति का अच्छा–खासा वर्णन इस उपन्यास में निहित है । यह शहरी और मध्यवर्गीय समाज का विस्तृत वर्णन और अंतर्विरोध से भरा हुआ है । इसके संबंध में डॉ. धर्मवीर भारती जी का कहना है –"लेखक ने समाज के लगभग प्रत्येक वर्ग का चित्रण किया है और हर एक की परंपरा, संस्कार,रहन–सहन मनोवृत्ति सजीव आदत और बोलचाल तक का सजीव और मार्मिक चित्रण हुआ है । मुझे यह कहने में कोई संकोच नहीं कि आज तक हिन्दी के किसी कथाकार ने उच्च से उच्च और निम्नवर्ग के जीवन से इतनी निकटता और घनिष्ठता स्थापित करने और उसका चित्रण करने में इतनी सफलता नहीं पायी है"[2]

इनके अलावा जगदीश चन्द्र जी का 'धरती धन न अपना' (1972 ई.) डॉ. विवेकीराय का 'बबूल', 'लोकऋण' (1977 ई.), गोविन्द मिश्र का 'लाल पीली जमीन', सुरेन्द्र पाल का 'लोकलाज खोई' द्रोणवीर कोहली का 'हवेलियों वालें' भीष्म साहनी का 'मैयादास की माडी', देवेंद्र सत्यार्थी के 'ब्रह्मपुत्र' में असम का लोकजीवन है तथा शैलेश मटियानी के 'हौलदार' उपन्यास में कुमाऊँ के पर्वतीय अंचल की कथा है । आदि अनेक आँचलिक उपन्यास स्वातंत्र के बाद लिखे गये ।

संदर्भ ग्रंथ सूची:–

1) अमृतलाल नागर – बूँद और समुद्र – भूमिका – पृ. सं. 3
2) 'सीमान्त प्रहरी' – (अमृतलाल नागर अंक) – 15 अगस्त 1966 – पृ. सं. 51